बीबी रहमानी खातून एवं अन्य

बनाम

हरकू गोप एवं अन्य

22 अप्रैल, 1981

[न्यायमूर्ति डी. ए. देसाई तथा न्यायमूर्ति बहरुल इस्लाम]

बिहार जोतों का समेकन एवं विखंडन निवारण अधिनियम, 1956 – धारा 4(1)(सी) – क्षेत्र एवं प्रभाव – धारा 4(1)(सी) में यह उपबंध है कि, पक्षकारों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, समेकन हेतु अधिसूचित भूमि के संबंध में किसी भी न्यायालय के समक्ष किसी भी अवस्था में लंबित सभी कार्यवाहियाँ समाप्त हो जाएँगी। वादियों के स्वत्व की घोषणा के लिए संस्थित वाद को विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री कर दिया गया था – उच्च न्यायालय में अपील लंबित रहने के दौरान अधिसूचना जारी की गई – अधिसूचना का प्रभाव – क्या विचारण न्यायालय का निर्णय एवं डिक्री भी समाप्त हो जाएगी?

बिहार जोतों का समेकन एवं विखंडन निवारण अधिनियम, 1956 की धारा 4(1)(सी) यह उपबंध करती है कि अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन अधिसूचना जारी होने पर, प्रथम न्यायालय अथवा अपीलीय न्यायालय सहित किसी भी न्यायालय या प्राधिकारी के समक्ष लंबित प्रत्येक वाद अथवा कार्यवाही, उस न्यायालय अथवा प्राधिकारी द्वारा इस आशय का आदेश पारित किए जाने पर, जिसके समक्ष वह वाद अथवा कार्यवाही लंबित है, समाप्त हो जाएगी। उक्त धारा के परन्तुक में यह उपबंध किया गया है कि ऐसी समाप्ति से प्रभावित व्यक्तियों के अधिकारों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा तथा उन्हें अधिनियम के उपबंधों के अनुसार सक्षम समेकन प्राधिकारियों के समक्ष विवादित अधिकार का प्रतिपादन करने का अधिकार रहेगा। राज्य सरकार ने अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन एक अधिसूचना जारी की।

वर्तमान अपीलकर्ताओं (जो मूल वादी थे) द्वारा प्रतिवादियों (जो वर्तमान प्रतिवादी हैं तथा अन्य तीन प्रतिवादियों) के विरुद्ध खाता सं. 458 एवं खाता सं. 459 की कृषि भूमि पर अपने स्वत्व की घोषणा तथा कब्जा पुनर्प्राप्ति के लिए संस्थित वाद को विचारण न्यायालय ने डिक्री कर दिया। प्रतिवादी सं. 7 ने केवल खाता सं. 458 में अपना हित होने का दावा किया था, जबकि प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने केवल खाता सं. 459 में अपना हित होने का दावा किया था। अपील में विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने विचारण न्यायालय की डिक्री की पुष्टि कर दी। प्रथम अपील जिला न्यायाधीश के समक्ष लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी सं. 7 की मृत्यु हो गई। उसके विधिक प्रतिनिधियों अथवा उसके अधीन दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति को उसके स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया गया तथा उनमें से किसी ने भी उच्च न्यायालय के समक्ष कोई अपील प्रस्तुत नहीं की।

उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने यह तर्क दिया कि विवादित भूमि के संबंध में अधिनियम की धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के परिणामस्वरूप संबंधित प्राधिकारियों द्वारा जोतों के समेकन का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है; अतः अधिनियम की धारा 4 के उपबंधों के अनुसार अपील समाप्त हो जाएगी। उक्त तर्क को स्वीकार करते हुए उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपील समाप्त हो गई है तथा उसने अधीनस्थ दोनों न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री को खाता सं. 458 तथा खाता सं. 459, दोनों के संबंध में अपास्त कर दिया।

इस न्यायालय के समक्ष अपील में अपीलकर्ता-वादियों की ओर से निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए गए : (1) यदि यह मान भी लिया जाए कि खाता सं. 459 के संबंध में द्वितीय अपील समाप्त हो गई थी, तब भी उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय, दोनों के निर्णय एवं डिक्री को अपास्त नहीं कर सकता था, क्योंकि वे दोनों अंतिम रूप धारण कर

चुके थे। (2) किसी भी स्थिति में, प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी सं. 7 की मृत्यु हो जाने पर, उसके विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित नहीं किया गया। परिणामस्वरूप, उसके द्वारा दायर अपील समाप्त हो गई तथा वर्तमान प्रतिवादियों में से किसी का भी उस संपत्ति में कोई हित शेष नहीं रहा। अतः उच्च न्यायालय द्वारा उस संपत्ति के संबंध में विचारण न्यायालय की डिक्री को अपास्त करना विधि-विरुद्ध था।

अपील को आंशिक रूप से निरस्त करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :

अधिनियम की धारा 3 के अधीन जारी अधिसूचना द्वारा जब किसी दीवानी कार्यवाही में विवादित भूमि को समेकन योजना के अंतर्गत लाया जाता है, तब उसका प्रभाव यह होता है कि विचारण, अपील अथवा पुनरीक्षण के किसी भी चरण में दीवानी न्यायालय के समक्ष लंबित कार्यवाही निष्प्रभावी हो जाती है। अतः उच्च न्यायालय का यह अभिनिर्धारण कि खाता सं. 459 के संबंध में द्वितीय अपील समाप्त हो गई थी तथा उसके साथ-साथ विचारण न्यायालय एवं प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय एवं डिक्री भी समाप्त हो गए थे, विधिसम्मत था। [562 जी-एच]

जब जोतों के समेकन की योजना लागू की जाती है, तब अधिनियम के अधीन सक्षम प्राधिकारियों को विवादित दावों का निर्णय करने का अधिकार प्रदान किया गया है। उन प्राधिकारियों को परस्पर विरोधी दलीलों का निर्बाध रूप से निर्णय करने देने के उद्देश्य से अधिनियम में यह व्यापक उपबंध किया गया है कि भूमि संबंधी दावों से संबंधित सभी लंबित कार्यवाहियाँ, वे जिस भी अवस्था में हों, समाप्त हो जाएँ। परस्पर विरोधी अधिकार-क्षेत्रों के टकराव से बचने के लिए अधिनियम यह उपबंध करता है कि ऐसे विवादों का परीक्षण विशेष रूप से अधिनियम के अधीन स्थापित प्राधिकारियों द्वारा ही किया जाएगा। इसी उद्देश्य से लंबित कार्यवाहियों के उपशमन का भी उपबंध किया गया है। [558 एफ-जी]

दीवानी विधि में 'उपशमन ' की अवधारणा यह है कि यदि विचारण, अपील अथवा पुनरीक्षण की कार्यवाही के दौरान किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाए और वाद का अधिकार जीवित रहे, तो मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित किया जाना आवश्यक होता है। ऐसा न किए जाने पर कार्यवाही समाप्त हो जाती है। यदि अपील अथवा पुनरीक्षण में किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाए और परिणामस्वरूप अपील अथवा पुनरीक्षण समाप्त हो जाए, तो इसका उस निर्णय, डिक्री अथवा आदेश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जिसके विरुद्ध अपील अथवा पुनरीक्षण दायर किया गया था। ऐसी स्थिति में अपील या पुनरीक्षण के अधीन निर्णय, डिक्री अथवा आदेश अंतिम रूप धारण कर लेता है। [559 बी-डी]

किन्तु अधिनियम की धारा 4 द्वारा परिकल्पित उपशमन का स्वरूप भिन्न है। यदि सिविल प्रक्रिया संहिता में निहित उपशमन की अवधारणा को वर्तमान मामले में लागू कर दिया जाए, तो इससे पक्षकारों को अपूरणीय क्षति पहुँचेगी। उदाहरणार्थ, यदि किसी अपील के समाप्त हो जाने के परिणामस्वरूप विचारण न्यायालय का निर्णय अथवा प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय अंतिम एवं बाध्यकारी हो जाए, तो समेकन प्राधिकारी भी उससे आबद्ध हो जाएँगे। ऐसी स्थिति में जिस पक्षकार की अपील अथवा पुनरीक्षण समाप्त हो गया है, वह अपीलीय अथवा पुनरीक्षण प्राधिकारी को अपने पक्ष में संतुष्ट करने का अवसर खो देगा, जिसके परिणामस्वरूप अपीलाधीन निर्णय, डिक्री अथवा आदेश में हस्तक्षेप करने अथवा उसे अपास्त करने की संभावना भी समाप्त हो जाएगी। यह कि धारा 4 का ऐसा आशय नहीं हो सकता था, यह उसकी धारा 4 के खंड (सी) के परन्तुक से स्पष्ट है। परन्तुक के प्रभाव से उपशमन के कारण किसी भी पक्षकार को कोई हानि नहीं होगी, क्योंकि पक्षकारों के अधिकारों के न्यायनिर्णयन हेतु एक विशेष मंच का गठन किया गया है। [559 ई-जी]

राम अधार सिंह बनाम रामरूप सिंह एवं अन्य, [1968] 2 सर्वोच्च न्यायालय निर्णय संग्रह 95; चत्तर सिंह एवं अन्य बनाम ठाकुर प्रसाद सिंह, ए.आई.आर. 1975 सर्वोच्च न्यायालय 1499; तथा सत्यनारायण प्रसाद एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, ए.आई.आर. 1980 सर्वोच्च न्यायालय 2051 — संदर्भित।

उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके त्रुटि की कि खाता सं. 458 के संबंध में निर्णय एवं डिक्री भी समाप्त हो गए थे। प्रतिवादी सं. 7 ने उक्त खाता सं. 458 के संबंध में पृथक, विशिष्ट एवं अनन्य अधिकार का दावा किया था। उसकी मृत्यु के उपरान्त उसके विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित नहीं किया गया; परिणामस्वरूप, उसकी अपील समाप्त हो गई। उसके विधिक प्रतिनिधियों ने भी उच्च न्यायालय के समक्ष कोई अपील प्रस्तुत नहीं की। अतः खाता सं. 458 के संबंध में अपीलकर्ताओं का स्वत्व विचारण न्यायालय की डिक्री के आधार पर अंतिम रूप से स्थापित हो गया। इसलिए, द्वितीय अपील के समाप्त हो जाने का अपीलकर्ताओं के खाता सं. 458 संबंधी अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। [562 सी-ई]

दीवानी अपीलीय अधिकारिता : दीवानी अपील सं. 1359/1981।

पटना उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील सं. 697/1974 में दिनांक 18 अगस्त, 1979 को पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपीलकर्ताओं की ओर से : श्री बी. पी. सिंह, अधिवक्ता।

प्रतिवादियों की ओर से : श्री एस. के. मेहता, अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय निम्नानुसार प्रदत्त किया गया :

न्यायमूर्ति देसाई : मोस्मात बीबी रहमानी खातून एवं अन्य ने अपर अधीनस्थ न्यायाधीश-प्रथम, गया के न्यायालय में स्वत्व वाद सं. 3/70 संस्थित कर, ग्राम परसैन स्थित तौजी सं. 7535 के अंतर्गत आने वाले खाता सं. 458 (नकदी) तथा खाता सं. 459 (भौली) में

सम्मिलित कुल 4 एकड़ 29 गुंठा कृषि भूमि पर अपने स्वत्व की घोषणा तथा कब्जा पुनर्प्राप्ति का अनुतोष माँगा। उक्त वाद में प्रतिवादी वर्तमान प्रतिवादीगण तथा अन्य तीन व्यक्ति, अर्थात् प्रतिवादी सं. 5, 6 एवं 7, थे। ब्रह्मदेव, जो प्रतिवादी सं. 7 था, ने 31 मार्च, 1959 को देवनन्दन सिंह (जो विचारण न्यायालय में प्रतिवादी सं. 5 था) द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर खाता सं. 458 में अपना हित होने का दावा किया। यह तथ्य स्पष्ट रूप से उल्लेखनीय है कि ब्रह्मदेव ने केवल खाता सं. 458 में अपना हित होने का दावा किया था, जबकि वर्तमान प्रतिवादियों ने केवल खाता सं. 459 में अपना हित होने का दावा किया था। विचारण न्यायालय ने वाद डिक्री करते हुए यह घोषित किया कि वादीगण दोनों खातों के स्वामी हैं तथा उन्हें उन दोनों खातों की भूमि पर कब्जा पुनः प्राप्त करने का अधिकार है।

उक्त निर्णय के विरुद्ध स्वत्व वाद सं. 7/74 जिला न्यायाधीश, गया के न्यायालय में प्रस्तुत की गई। इस अपील का विचारण विद्वान चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, गया द्वारा किया गया, जिन्होंने दिनांक 12 जुलाई, 1974 को अपना निर्णय एवं डिक्री पारित की। विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने अपील निरस्त कर दी तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री की पुष्टि की।

केवल वर्तमान प्रतिवादियों ने ही पटना उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील सं. 697/74 प्रस्तुत की। यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि प्रतिवादी सं. 7 ब्रह्मदेव, जिसकी जिला न्यायालय के समक्ष अपील लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी और जिसके विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित नहीं किया गया था, अथवा उसके अधीन दावा करने वाला कोई अन्य व्यक्ति, न तो जिला न्यायालय में लंबित अपील में प्रतिस्थापित हुआ और न ही उनमें से किसी ने उच्च न्यायालय के समक्ष कोई अपील प्रस्तुत की। वर्तमान अपील के निस्तारण के लिए इस तथ्य का विशेष महत्व है; अतः इसका स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है।

हरकू गोप एवं अन्य तीन व्यक्तियों, जिन्होंने केवल खाता सं. 459 में अपना हित होने का दावा किया था, ने विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा उनकी अपील निरस्त किए जाने के विरुद्ध द्वितीय अपील प्रस्तुत की। जब द्वितीय अपील सं. 697/74 उच्च न्यायालय में लंबित थी, तब अपीलकर्ताओं (जो वर्तमान न्यायालय में प्रतिवादी हैं) की ओर से दिनांक 16 नवम्बर, 1978 को एक शपथ-पत्र प्रस्तुत किया गया, जिसमें न्यायालय का ध्यान बिहार जोतों का समेकन एवं विखंडन निवारण अधिनियम, 1956 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 3 के अधीन जारी अधिसूचना की ओर आकृष्ट किया गया। शपथ-पत्र में न्यायालय को यह भी सूचित किया गया कि जिस ग्राम में विवादित खाता सं. 458 एवं 459 स्थित हैं, उसे जोतों के समेकन के लिए अधिसूचित कर दिया गया है और इसलिए अधिनियम की धारा 4 के उपबंधों के अनुसार उच्च न्यायालय में लंबित अपील समाप्त हो जाएगी। उच्च न्यायालय ने उक्त निवेदन को स्वीकार करते हुए दिनांक 18 अगस्त, 1979 के आदेश द्वारा अपील का निस्तारण किया, जिसके प्रवर्तनशील भाग में निम्नलिखित कहा गया है :

> "अपील समाप्त हो जाती है तथा परिणामस्वरूप अधीनस्थ दोनों न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्रियाँ भी समाप्त हो जाने के कारण एतद्द्वारा अपास्त की जाती हैं।"

मूल वादीगण उच्च न्यायालय के उस आदेश से असंतुष्ट थे, जिसके द्वारा न केवल प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत द्वितीय अपील को समाप्त घोषित किया गया, बल्कि यह कहते हुए कि वे भी समाप्त हो गए हैं, विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय एवं डिक्रियों को भी अपास्त कर दिया गया। अतः उन्होंने उक्त आदेश के विरुद्ध विशेष अनुमति द्वारा यह अपील प्रस्तुत की।

अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री बी. पी. सिंह ने तर्क दिया कि यदि अधिनियम की धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी होने के परिणामस्वरूप अधिनियम की

धारा 4 के उपबंधों के कारण द्वितीय अपील समाप्त भी हो जाए, तब भी उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय एवं डिक्रियों को अपास्त नहीं कर सकता था, क्योंकि उनके अनुसार जब कोई अपील समाप्त हो जाती है, तब जिस न्यायालय के निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध अपील की गई थी, वह निर्णय एवं डिक्री अंतिम रूप धारण कर लेती है। विद्वान अधिवक्ता का दूसरा तर्क यह था कि किसी भी स्थिति में वर्तमान प्रतिवादियों का खाता सं. 458 में कोई हित नहीं था। केवल ब्रह्मदेव ने, जिसे देवनन्दन सिंह द्वारा विक्रय किए जाने के आधार पर, खाता सं. 458 में अपना हित होने का दावा किया था। ब्रह्मदेव की मृत्यु प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान हो गई थी तथा उसके उत्तराधिकारियों एवं विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित नहीं किया गया। फलस्वरूप, उसके संबंध में खाता सं. 458 के विषय में अपील समाप्त हो गई। वर्तमान प्रतिवादीगण को खाता सं. 458 के संबंध में कोई अपील प्रस्तुत करने का अधिकार नहीं था। अतः उच्च न्यायालय खाता सं. 458 के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को अपास्त नहीं कर सकता था।

अधिनियम की धारा 3 राज्य सरकार को जोतों के समेकन की योजना बनाने के अपने आशय की घोषणा करने की शक्ति प्रदान करती है। जब राज्य सरकार किसी ग्राम में जोतों के समेकन की योजना बनाने का आशय करती है, तब वह निर्दिष्ट क्षेत्र में जोतों के समेकन की योजना बनाने के अपने आशय की घोषणा करते हुए एक अधिसूचना जारी करती है। धारा 4 यह उपबंध करती है कि धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन अधिसूचना के प्रकाशन के उपरान्त, धारा 4 में विनिर्दिष्ट परिणाम प्रभावी होंगे। ऐसा ही एक परिणाम धारा 4 के खंड (सी) में विनिर्दिष्ट है, जो निम्नलिखित है :

"धारा 4 – अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन अधिसूचना का प्रभाव।—

धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन अधिसूचना के राजपत्र में प्रकाशित होने पर, इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अधिसूचना में विनिर्दिष्ट तिथि से लेकर समेकन कार्यवाहियों के उपशमन तक, उस क्षेत्र में, जिससे अधिसूचना संबंधित है, निम्नलिखित परिणाम प्रभावी होंगे, अर्थात् :—

... ...

(सी) अभिलेखों के संशोधन के लिए प्रत्येक कार्यवाही तथा उस क्षेत्र में स्थित किसी भूमि के संबंध में अधिकार अथवा हित की घोषणा के लिए प्रत्येक वाद एवं कार्यवाही, अथवा किसी अन्य ऐसे अधिकार की घोषणा या न्यायनिर्णयन के लिए प्रत्येक वाद एवं कार्यवाही, जिसके संबंध में इस अधिनियम के अधीन कार्यवाही की जा सकती है अथवा की जानी चाहिए, यदि वह किसी प्रथम न्यायालय, अपीलीय, निर्देशन अथवा पुनरीक्षण अधिकारिता वाले किसी न्यायालय या प्राधिकारी के समक्ष लंबित हो, तो उस न्यायालय अथवा प्राधिकारी द्वारा, जिसके समक्ष ऐसा वाद अथवा कार्यवाही लंबित है, इस आशय का आदेश पारित किए जाने पर, वह उपशमित हो जाएगी।"

धारा 4 के खंड (सी) में कुल पाँच परन्तुक हैं, किन्तु उनमें से वर्तमान विवाद के लिए केवल एक परन्तुक प्रासंगिक है, जो निम्नवत् है :

"परन्तु यह भी कि ऐसा उपशमन उन प्रभावित व्यक्तियों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा, जिन्हें उक्त वादों अथवा कार्यवाहियों में विवादित अधिकार अथवा हित का प्रतिपादन इस अधिनियम तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार सक्षम समेकन प्राधिकारियों के समक्ष करने का अधिकार होगा।"

वर्तमान अपील उस वाद से उत्पन्न हुई है जिसे वर्तमान अपीलकर्ताओं ने, जो मूल वादी थे, अपने स्वत्व की घोषणा तथा उसके परिणामस्वरूप कब्जा प्राप्त करने के अनुतोष के लिए संस्थित किया था। अर्थात् यह कृषि भूमि से संबंधित ऐसा वाद था जिसमें भूमि पर स्वत्व का दावा किया गया था तथा उसी का विवाद था। उक्त वाद, प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत द्वितीय अपील के रूप में लंबित था, तभी अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन अधिसूचना जारी की गई। फलतः, धारा 4(सी) के उपबंध वर्तमान मामले पर लागू होंगे और उसमें विहित वैधानिक परिणाम अनिवार्यतः प्रभावी होंगे। अतः यह निर्विवाद है कि द्वितीय अपील समाप्त हो जाएगी। अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सिंह ने भी इस विधिक परिणाम का कोई विवाद नहीं किया।

श्री सिंह की शिकायत यह है कि उच्च न्यायालय ने, यद्यपि द्वितीय अपील को समाप्त घोषित करने का आदेश पारित किया, तथापि उसने यह कहते हुए कि वे कार्यवाहियाँ भी समाप्त हो गई हैं, विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय एवं डिक्रियों, जो वर्तमान अपीलकर्ताओं के पक्ष में थीं, को भी अपास्त कर दिया। प्रथम दृष्टया यह तर्क अत्यन्त आकर्षक प्रतीत होता है, किन्तु यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए, तो इससे पक्षकारों को अपूरणीय क्षति पहुँचने की संभावना उत्पन्न हो जाएगी।

जब जोतों के समेकन की योजना लागू की जाती है, तब अधिनियम के अधीन स्थापित प्राधिकारियों को समेकन से संबंधित भूमि पर विभिन्न दावों के न्यायनिर्णयन का अधिकार प्रदान किया जाता है। भूमि पर परस्पर परस्पर विरोधी दलीलों का निर्णय अधिनियम के अधीन स्थापित प्राधिकारियों द्वारा बिना किसी बाधा के किया जा सके, इस उद्देश्य से अधिनियम में यह व्यापक उपबंध किया गया कि भूमि संबंधी दावों से संबंधित दीवानी न्यायालयों की श्रेणी में लंबित सभी कार्यवाहियाँ—चाहे वे विचारण न्यायालय, अपील अथवा पुनरीक्षण के स्तर पर लंबित

हों—समाप्त हो जाएँ। इस उपबंध का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि जोतों के समेकन की कार्यवाही के दौरान अधिनियम के अधीन स्थापित प्राधिकारी, दीवानी न्यायालयों में लंबित कार्यवाहियों से उत्पन्न किसी अवरोध के बिना तथा दीवानी न्यायालयों के निर्णयों से अप्रभावित रहते हुए, भूमि संबंधी दावों का निर्बाध न्यायनिर्णयन कर सकें। परस्पर प्रतिस्पर्धी अधिकार-क्षेत्रों के कारण उत्पन्न होने वाले टकराव से बचने के लिए विधानमंडल ने यह व्यवस्था की कि समेकनाधीन भूमि से संबंधित दावों का परीक्षण केवल अधिनियम के अधीन स्थापित प्राधिकारियों द्वारा ही किया जाएगा तथा अन्य सभी प्रतिस्पर्धी अधिकार-क्षेत्र समाप्त हो जाएँगे। साथ ही, लंबित कार्यवाहियों का निस्तारण करना भी आवश्यक था; इसी कारण ऐसी कार्यवाहियों के उपशमन का उपबंध किया गया।

'उपशमन ' की अवधारणा दीवानी विधि में सुविदित है। यदि किसी वाद, अपील अथवा पुनरीक्षण की कार्यवाही के दौरान किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाए और वाद का अधिकार जीवित रहे अथवा उसके दावे का निर्णय किया जाना शेष हो, तो मृत पक्षकार के उत्तराधिकारियों एवं विधिक प्रतिनिधियों को उसके स्थान पर प्रतिस्थापित किया जाना आवश्यक होता है। ऐसा न किए जाने पर कार्यवाही समाप्त हो जाती है। यदि किसी वाद का कोई पक्षकार मृत्यु को प्राप्त हो जाए और परिणामस्वरूप वाद समाप्त हो जाए, तो संपूर्ण वाद समाप्त हो जाता है। यदि अपील अथवा पुनरीक्षण में किसी पक्षकार की मृत्यु हो जाए और उसके फलस्वरूप अपील अथवा पुनरीक्षण समाप्त हो जाए, तो उसका उस निर्णय, डिक्री अथवा आदेश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जिसके विरुद्ध अपील अथवा पुनरीक्षण प्रस्तुत किया गया था। वस्तुतः ऐसी स्थिति में अपील अथवा पुनरीक्षणाधीन निर्णय, डिक्री अथवा आदेश अंतिम रूप धारण कर लेता है। किन्तु अधिनियम की धारा 4 द्वारा परिकल्पित उपशमन की योजना ऐसी नहीं है। यदि सिविल प्रक्रिया संहिता में निहित उपशमन की अवधारणा को यहाँ लागू कर दिया जाए, तो इससे पक्षकारों को

अपूरणीय क्षति पहुँचेगी।उदाहरणार्थ, यदि किसी अपील के समाप्त हो जाने के परिणामस्वरूप विचारण न्यायालय का निर्णय अथवा प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय अंतिम एवं बाध्यकारी हो जाए, तो समेकन प्राधिकारी भी उससे आबद्ध हो जाएँगे। ऐसी स्थिति में जिस पक्षकार की अपील अथवा पुनरीक्षण समाप्त हो गया है, वह अपीलीय अथवा पुनरीक्षण प्राधिकारी को अपने पक्ष में संतुष्ट करने का अवसर खो देगा, जिसके परिणामस्वरूप अपीलाधीन निर्णय, आदेश अथवा डिक्री में हस्तक्षेप करने अथवा उसे अपास्त कराने की संभावना समाप्त हो जाएगी। धारा 4 का ऐसा आशय न था और न ही हो सकता था। यह तथ्य धारा 4 के खंड (सी) के उपर्युक्त उद्धृत परन्तुक से पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि ऐसा उपशमन उन व्यक्तियों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा, जिन्हें वाद अथवा कार्यवाही में विवादित अधिकार अथवा हित का प्रतिपादन अधिनियम तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार सक्षम समेकन प्राधिकारियों के समक्ष करने का अधिकार है। अतः उपशमन के कारण किसी भी पक्षकार को कोई हानि नहीं होगी, क्योंकि अधिनियम की धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी होने के परिणामस्वरूप जिन कार्यवाहियों का उपशमन होता है, उनमें निहित अधिकारों के न्यायनिर्णयन हेतु एक विशेष मंच की व्यवस्था की गई है। यदि अपीलकर्ताओं द्वारा प्रतिपादित व्याख्या को स्वीकार कर लिया जाए, तो उससे अपूरणीय क्षति होगी तथा वह अधिनियम के उद्देश्य के प्रतिकूल सिद्ध होगी। समेकन का समस्त कार्य गंभीर रूप से बाधित हो जाएगा और जिसकी अपील लंबित है, वह अपीलीय न्यायालय को अपने पक्ष में संतुष्ट करने का अवसर खो देगा। यदि वह अपील में सफल होता, तो उसके प्रतिपक्षी के पक्ष में पारित निर्णय, डिक्री अथवा आदेश, जो अपील के उपशमन के कारण अंतिम हो गया होता, पलट सकता था। अतः विधानमंडल का आशय यह था कि केवल अपील अथवा पुनरीक्षण ही समाप्त न हो, बल्कि वह निर्णय, आदेश अथवा डिक्री भी, जिसके विरुद्ध अपील लंबित है, निष्प्रभावी हो जाए, क्योंकि वे भी

उपशमन के प्रभाव में आ जाएँगे। इससे समेकन प्राधिकारी समेकनाधीन भूमि से संबंधित स्वत्व, अन्य अधिकार अथवा हित संबंधी दावों का स्वतंत्र एवं निर्बाध न्यायनिर्णयन कर सकेंगे। अतः हमारे मत में, उच्च न्यायालय द्वारा न केवल यह अभिनिर्धारित करना कि उसके समक्ष लंबित द्वितीय अपील समाप्त हो गई थी, बल्कि यह भी कि उसके साथ-साथ विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय एवं डिक्री भी समाप्त हो गए थे, पूर्णतः विधिसम्मत था। हम इस निष्कर्ष पर अधिनियम की धारा 3 एवं धारा 4 की भाषा तथा उसकी समग्र योजना के आधार पर पहुँचे हैं। इसके अतिरिक्त, यद्यपि पूर्ववर्ती निर्णयों में यह प्रश्न प्रत्यक्ष रूप से विचाराधीन नहीं था, तथापि जिन निर्णयों का उल्लेख किया गया है, वे भी इसी दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं।

राम अधार सिंह बनाम रामरूप सिंह एवं अन्य[1] में इस न्यायालय ने एक समरूप विधि, अर्थात् उत्तर प्रदेश जोतों का समेकन अधिनियम, 1953 (संक्षेप में "उत्तर प्रदेश अधिनियम") की धारा 5 के प्रभाव का परीक्षण किया था। धारा 5 में, धारा 4 के अधीन जोतों के समेकन की योजना तैयार करने के आशय की घोषणा किए जाने के परिणामों का उपबंध था। वर्ष 1966 में संशोधन से पूर्व उक्त धारा में समेकन कार्यवाही प्रारम्भ होने के समय दीवानी न्यायालयों में लंबित कार्यवाहियों के उपशमन का कोई प्रावधान नहीं था। संशोधन अधिनियम 21, 1966 द्वारा धारा 5 में उपधारा (2)(ए) जोड़ी गई, जिसके द्वारा लंबित कार्यवाहियों के उपशमन का उपबंध किया गया। यह उपबंध वर्तमान अधिनियम की धारा 4(सी) के समरूप है। उक्त मामले में अधिसूचना जारी होने के समय विशेष अनुमति द्वारा दायर अपील इस न्यायालय में लंबित थी। तत्पश्चात् संशोधन अधिनियम, 1966 द्वारा जोड़ी गई धारा 5(2)(ए) का संज्ञान लेते हुए इस न्यायालय से अपील को समाप्त घोषित करने का निवेदन किया गया। संशोधन अधिनियम की संवैधानिक वैधता को

1 [1968] 2 सर्वोच्च न्यायालय निर्णय संग्रह

चुनौती देने वाले तर्क को अस्वीकार करने के उपरान्त, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जिस वाद से उक्त अपील उत्पन्न हुई थी, वह भी धारा 5(2)(ए) के कारण समाप्त हो जाएगा। विशेष महत्व की बात यह है कि न्यायालय ने केवल अपने समक्ष लंबित अपील को ही समाप्त नहीं माना, बल्कि सम्पूर्ण वाद को ही समाप्त माना। यद्यपि उस मामले में यह विशिष्ट तर्क प्रस्तुत नहीं किया गया था कि केवल अपील समाप्त होगी और अपीलाधीन निर्णय यथावत् रहेगा अथवा सम्पूर्ण वाद समाप्त होगा, तथापि इस न्यायालय की उक्त टिप्पणी से स्पष्ट है कि उसके मत में सम्पूर्ण वाद ही समाप्त हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप इस न्यायालय में लंबित अपील निष्फल हो जाती है। राम अधार सिंह के उक्त निर्णय का अनुसरण इस न्यायालय ने *चत्तर सिंह एवं अन्य बनाम ठाकुर प्रसाद सिंह* [2]में भी किया। *चत्तर सिंह* के मामले में अपील ऐसे वाद से संबंधित थी जिसमें उस भूमि पर अधिकार का दावा किया गया था जिसके संबंध में संशोधन अधिनियम 21, 1966 द्वारा संशोधित उत्तर प्रदेश अधिनियम के अधीन अधिसूचना जारी की गई थी। जब यह अपील इस न्यायालय में लंबित थी, उसी दौरान अधिसूचना जारी हुई। तब अपीलकर्ताओं ने अपील को समाप्त घोषित करने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया।उक्त आवेदन स्वीकार करते हुए इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि *वाद तथा उससे संबंधित समस्त अपीलें समाप्त हो गई हैं*, साथ ही पक्षकारों को यह स्वतंत्रता प्रदान की कि वे उत्तर प्रदेश अधिनियम के अधीन सक्षम प्राधिकारियों के समक्ष अपने अधिकारों का प्रतिपादन करें। उपर्युक्त दोनों निर्णयों का उल्लेख इस न्यायालय ने *सत्यनारायण प्रसाद साह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य* [3]में भी किया। उस मामले में, जब कार्यवाही उच्च न्यायालय में लंबित थी, तभी वर्तमान अधिनियम की धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी हुई। फलस्वरूप धारा 4(सी) के अधीन आदेश

---

2. ए.आई.आर. 1975 सर्वोच्च न्यायालय 1499

3. ए.आई.आर. 1980 सर्वोच्च न्यायालय 2051।

पारित कर न केवल लंबित कार्यवाही, बल्कि वह मूल वाद, जिससे वह कार्यवाही उत्पन्न हुई थी, भी समाप्त घोषित कर दिया गया। तत्पश्चात् भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट याचिकाएँ दायर कर अधिनियम की धारा 4 की संवैधानिक वैधता को अनुच्छेद 14 एवं अनुच्छेद 19 का उल्लंघन बताते हुए चुनौती दी गई। इस न्यायालय ने धारा 4 की वैधता को चुनौती अस्वीकार करते हुए तथा *राम अधार सिंह एवं चत्तर सिंह* के निर्णयों की पुष्टि करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि संभवतः उच्च न्यायालय को विचारण न्यायालय की डिक्री को अपास्त नहीं करना चाहिए था; उसे केवल यह घोषित करना चाहिए था कि कार्यवाही समाप्त हो गई है। इस टिप्पणी का अभिप्राय यह था कि समस्त दीवानी कार्यवाही निष्प्रभावी हो जाती है। दूसरे शब्दों में, कार्यवाही अपने प्रारम्भ से ही समाप्त मानी जाती है और उस कार्यवाही के किसी भी स्तर पर दिया गया कोई निर्णय अधिनियम के अधीन पक्षकारों के दावों के न्यायनिर्णयन पर कोई प्रभाव नहीं डालता।

अतः सिद्धांत तथा पूर्वनिर्णयों , दोनों के आधार पर यह पूर्णतः स्पष्ट है कि जहाँ किसी दीवानी कार्यवाही में विवादित भूमि को समेकन योजना के अधीन लाने के लिए अधिनियम की धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी की जाती है, वहाँ विचारण न्यायालय, अपीलीय न्यायालय अथवा पुनरीक्षण न्यायालय में लंबित समस्त दीवानी कार्यवाहियाँ, उक्त अधिसूचना जारी होने के वैधानिक परिणामस्वरूप, समाप्त हो जाती हैं। ऐसे उपशमन का प्रभाव यह होता है कि संपूर्ण दीवानी कार्यवाही ही निष्प्रभावी हो जाती है। अतः वर्तमान अपील में उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश विधिसम्मत एवं वैध है, क्योंकि उसने न केवल अपने समक्ष लंबित द्वितीय अपील को समाप्त घोषित किया, बल्कि विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय एवं डिक्रियों को भी समाप्त माना, क्योंकि संपूर्ण दीवानी कार्यवाही ही निष्प्रभावी हो गई थी।

श्री सिंह का अगला तर्क यह था कि उच्च न्यायालय को खाता सं. 458 के संबंध में पारित डिक्री को निष्प्रभावी नहीं करना चाहिए था, क्योंकि उस खाते में केवल ब्रह्मदेव तथा देवनन्दन सिंह, क्रमशः प्रतिवादी सं. 7 एवं 5, का ही हित था और वर्तमान प्रतिवादियों का खाता सं. 458 में कोई हित नहीं था। प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह स्वीकार किया कि वर्तमान प्रतिवादियों का वास्तव में खाता सं. 458 में कोई हित नहीं है। अभिलेख से यह भी स्पष्ट होता है कि ब्रह्मदेव ने यह दावा किया था कि उसने प्रतिवादी सं. 5 देवनन्दन सिंह से उक्त खाता सं. 458 की भूमि क्रय की थी और उसी आधार पर उसने उसमें अपना हित होने का दावा किया। प्रतिवादी सं. 5 एवं 6 के विरुद्ध वाद एकपक्षीय रूप से चला, जबकि प्रतिवादी सं. 7 ब्रह्मदेव ने केवल खाता सं. 458 के संबंध में वाद का प्रतिवाद किया। विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी सं. 7 ब्रह्मदेव के तर्क को अस्वीकार कर वादियों के स्वत्व को स्वीकार कर लिया। इसके विरुद्ध प्रतिवादी सं. 7 ब्रह्मदेव ने अन्य प्रतिवादियों के साथ मिलकर जिला न्यायालय में अपील प्रस्तुत की। जिला न्यायालय में अपील लंबित रहने के दौरान ब्रह्मदेव, जो अपीलकर्ता था, की मृत्यु हो गई। उसके विधिक प्रतिनिधियों को उसके स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया गया। चूँकि प्रतिवादी सं. 7 ब्रह्मदेव ने खाता सं. 458 के संबंध में पृथक, विशिष्ट एवं अनन्य अधिकार का दावा किया था, इसलिए उसकी मृत्यु के उपरान्त उसके विधिक प्रतिनिधियों का प्रतिस्थापन किया जाना आवश्यक था। किन्तु वह स्वयं अपीलकर्ता था और उसके स्थान पर किसी को प्रतिस्थापित नहीं किया गया। स्पष्टतः, परिणामस्वरूप ब्रह्मदेव द्वारा प्रस्तुत अपील समाप्त हो गई। यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ब्रह्मदेव के विधिक प्रतिनिधियों ने उच्च न्यायालय में कोई द्वितीय अपील प्रस्तुत नहीं की। द्वितीय अपील केवल वर्तमान प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत की गई थी, जिन्होंने केवल खाता सं. 459 में अपना हित होने का दावा किया था। फलतः, जब वर्तमान प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत द्वितीय अपील समाप्त हुई, तो उसका प्रभाव केवल खाता सं. 459 तक ही सीमित था।

उसका खाता सं. 458 के संबंध में वर्तमान अपीलकर्ताओं के स्वत्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता था, क्योंकि वह स्वत्व विचारण न्यायालय की डिक्री के आधार पर पहले ही अंतिम रूप से स्थापित हो चुका था। इसका कारण यह था कि ब्रह्मदेव की अपील, धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी होने से पूर्व ही, उसके विधिक प्रतिनिधियों के प्रतिस्थापन न होने के कारण समाप्त हो चुकी थी। अतः उच्च न्यायालय को खाता सं. 458 के संबंध में किसी प्रकार का आदेश पारित करने का कोई अधिकार नहीं था। इस सीमा तक वर्तमान अपील स्वीकार की जानी चाहिए तथा उच्च न्यायालय के आदेश में तदनुसार उपयुक्त संशोधन किया जाना आवश्यक है।

फलस्वरूप, यह अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है। तौजी सं. 7535, ग्राम परसैन स्थित खाता सं. 459 (भौली) के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा कार्यवाही को समाप्त घोषित किया जाना विधिसम्मत था। अतः खाता सं. 459 के संबंध में संपूर्ण दीवानी कार्यवाही समाप्त मानी जाएगी और पक्षकार अपने-अपने अधिकारों का न्यायनिर्णयन अधिनियम के अधीन सक्षम समेकन प्राधिकारियों के समक्ष करा सकेंगे। जहाँ तक खाता सं. 458 (नकदी) का संबंध है, उस पर अपीलकर्ताओं के स्वत्व की जो घोषणा विचारण न्यायालय द्वारा की गई थी, वह अब ब्रह्मदेव अथवा उसके माध्यम से अधिकार का दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति द्वारा चुनौती से परे हो चुकी है। द्वितीय अपील के समाप्त हो जाने का खाता सं. 458 पर अपीलकर्ताओं के स्वत्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अतः खाता सं. 458 के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा की गई स्वत्व-घोषणा पुनः बहाल की जाती है। मामले की परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, व्यय के संबंध में कोई आदेश पारित नहीं किया जाता।

पी. बी. आर. *अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।*

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।